।। श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ।।

।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः।।

वैष्णव संस्कार कौस्तुभ

– पं. श्री वैष्णवदास शास्त्री

* श्रीसर्वेश्वरो जयति *

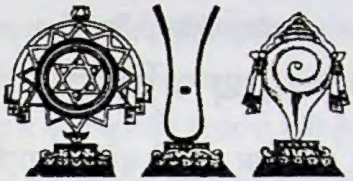

॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ॥

वैष्णव संस्कार कौस्तुभ

हिन्दी भाषा एवं सग्रहकर्ता

पं० श्रीवैष्णवदास शास्त्री

सम्पादक--

निम्बार्कभूषण पं० वासुदेवशरण उपाध्याय

व्या० सा० वेदान्ताचार्य

प्रकाशक--

अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यचार्यपीठस्थ शिक्षा समिति

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) किशनगढ, जि० अजमेर (राज०)

अक्षय तृतीया

वि० सं० २०६६ श्रीनिम्बार्काब्द ५१०५

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥

* अथ भूमिका *

भगवान् श्रीसर्वेश्वर सव की बुद्धि के साक्षी होकर भावना के अनुकूल जीव को कार्य्य में प्रवृत्त करते हैं। आजकल विद्वान् और धन सम्पत्ति वाले दोनों लोकोपकार धर्म से उदासीन हैं। हजारों रुपया व्यर्थ काम में लग जाने से क्लेश नहीं होता है जैसे धर्म में खर्च करने से क्लेश होता है। धर्म के काम कुछ करता है तो अपना अधिकार रखकर केवल लोक प्रसिद्धि के लिये और अपने पूर्वज के किया धर्म देव ब्राह्मणों को दिया भूमि आदि को फिर अपने अधीन कर लेता है और अन्य का दिया या उसका मालिक अपने शरीर से उपार्जन किया है उसको अपने हाथ लेता है इस तरह करने से अपने और अपने पूर्वजों को नरक में ले जाता है। दान की गयी एक गौ भूलकर पास आजाने से राजा नृग को कृकलास गिरगिट बनना पड़ा ।

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है, भागवत दशम स्कन्ध उत्तरार्ध ६४ अध्याय में, नृग राजा के मोक्ष करने बाद ।

नाहं हलाहलं मन्ये विषं यस्य प्रतिक्रिया ।
ब्रह्मस्वं हि विषं प्रोक्तं नास्य प्रतिविधिर्भुवि ।।३३ ।।

भाषा-भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि, मैं हलाहल विष को विष नहीं मानता हूं, क्योंकि हलाहल विष खाने पर औषध से विष दूर हो सकता है। देव ब्राह्मण के धन हलाहल विष कहा है उस विष को खाने पर विष उतरने का उपाय भूमि में मैं नहीं देखता हूँ॥३३॥

हिनस्ति विषमत्तारं वह्निरद्भिः प्रशाम्यति ।
कुलं समूलं दहति ब्रह्मस्वारणिपावकः ।।३४ ।।

भाषा-विष खाने से विष खाने वाला मनुष्य को मार देता है, मकान में अग्नि लगने से जल से अग्नि ठण्डी हो जाती है। देव ब्राह्मण के धन रूप जंगल अग्नि है कुल को जड़ से जला देती है। भाव यह है कि जंगल में वांस के रगड़ होने से अग्नि उत्पन्न होकर जंगल मात्र को जड़ से जला देती है, उसी प्रकार देव ब्राह्मण को धन दिया जङ्गल के अग्नि तुल्य है फिर लेने से कुल रूप जङ्गल को जड़ से जला देती है कुल में दीपक-प्रकाश करने वाला कोई नहीं रहता है, इसलिये देव ब्राह्मण के धन, भूमि आदि के हाथ नहीं लगाना ही श्रेष्ठ है ॥३४॥

ब्रह्मस्वं दुरनुज्ञातं भुक्तं हन्ति त्रिपूरुषम्।
प्रसह्य तु बलाद्भुक्तं दशपूर्वान्दशापरान्॥३५॥

भाषा- देव ब्राह्मण के धन छिनकर भोग करने से तीन पीडी का नाश करता है। छिनने वाले के दश पीडी पहले दश पीड़ी पीछे कुल का नाश करता है॥३५॥

राजानो राजलक्ष्म्यान्धा नात्मपातंविचक्षते।
निरयं येऽभिमन्यन्ते ब्रह्मस्वं साधु बालिशाः॥३७॥

भाषा-राज्य लक्ष्मी से अन्धे राजावों का आत्मा का गिरना नरक में होता है। जो कि अल्प बुद्धि वाले देव ब्राह्मण के धन हरण करना अच्छा समझते हैं॥३६॥

गृह्णन्ति यावतः पांसून् क्रन्दन्तामश्रुबिन्दबः।
विप्राणां हृतबृत्तीनां बदान्यानां कुटुम्बिनाम्॥३७॥

भाषा-जिन ब्राह्मणों के जमीन धन हरण हो गया है उसके रोदन से जितने नेत्र से विन्दु जमीन में पड़ते हैं॥३७॥

राजानो राजकुल्याश्च तावतोऽब्दान्निरङ्कुशाः।

कुम्भीपाकेषु पच्यन्ते ब्रह्मदायापहारिणः ।।३८ ।।

भाषा-उतने वर्ष पर्यन्त देव ब्राह्मण भाग हरण करने वाले राजा और राजा के मन्त्री आदि कुम्भी पाक नरक में रहते हैं।।३८।।

स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्तिं हरेच्च यः ।
षष्टिवर्ष सहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ।।३९ ।।

भाषा-अपना दिया वा अन्य का दिया देव ब्राह्मण के धन जमीन जो छीन लेता है वह ६० हजार वर्ष बिष्ठा में कीड़ा होता है।।३९।।

न मे ब्रह्मधनं भूयाद्यद्गृध्वाऽल्पायुषो नृपाः ।
पराजिताश्च्युता राज्याद्भवन्त्युद्वेजिनोऽहयः ।।४० ।।

भाषा-भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि देव ब्राह्मण के धन मेरे को न होवे। जिसके लोभकर राजा अल्पायु हो जाते हैं और पराजित, राज्य से भ्रष्ट हो जाते हैं।।४०।।

जो अपना कल्याण चाहे तो वह इस श्रीकृष्ण भगवान् के वचन को माने। और प्रत्येक व्यक्ति को उचित है कि छल, राजस, तामस त्याग कर शुद्ध सात्विक प्रवृत्ति निवृत्ति धर्म करे जिसको जैसा अधिकार होय दोनों धर्म के साधन पंच संस्कार है। इन संस्कारों का परिज्ञान कराने वाला निम्बार्क सम्प्रदाय में ''सदाचार'' ''स्वधर्मामृत सिन्धु'' एवं ''गुरु नति वैजयन्ति'' ग्रन्थ विद्यमान हैं। ''सदाचार'' श्री श्रीनिवासाचार्यजी महाराज ने संग्रह किया है सलेमाबाद में लेख विद्यमान है। इन ग्रन्थों के रहते हुये सर्व साधारण को संस्कार ज्ञान होना कठिन है इसलिये मैंने हिन्दी भाषा के सहित ''वैष्णव संस्कार कौस्तुभ'' नामक छोटा ग्रन्थ संग्रह किया है आशा है कि सर्वसाधारण के लिए उपकारक होगा।

–लेखक पं० श्रीवैष्णवदास शास्त्री

॥ श्रीसर्वेश्वरो जयति ॥

विद्वद्वरेण्य पं० श्रीवैष्णवदास-संगृहीत--

वैष्णव संस्कार कौस्तुभः

श्रीगुरून्प्रणिपत्यादौ पूर्वाचार्य्याश्च दैशिकान्।
वैष्णवानां प्रवोधार्थं संस्कार-पञ्च कीर्त्यते।।
यस्यदेवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।

श्वेता० अ० ६ श्रु० ११

भाषा-जो पुरुष जैसे परमेश्वर में पराभक्ति रखता है वैसे ही गुरु में भक्ति रखता है अर्थात् हरि गुरु में भेद नहीं मानता है। उसी का अर्थ गुरु वेद में कहा हुआ वस्तु का प्रकाश करता हैं। इस श्रुति से गुरु में श्रद्धा होनी चाहिये।

भागवत एकादशस्कन्धश्रीकृष्णवचन--

आचार्य्यं मां विजानीयान्नावमन्येत कर्हिचित्।
न मर्त्यबुद्ध्याऽसूयेत सर्वदेवमयो गुरुः।।

भाषा-आचार्य्य मेरा स्वरूप जाने कभी उनका अपमान नहीं करना और मनुष्य समझ कर कभी अनादर नहीं करना क्योंकि गुरु सर्वदेव स्वरूप हैं॥२॥

राज धर्म में--

ऋषयश्च हि देवाश्च प्रीयन्ते पितृभिः सह।
पूज्यमानेषु गुरुषु तस्मात्पूज्यतमो गुरुः।।३।।

भाषा-ऋषिगण देवगण पितृगणों के सहित तृप्त होते हैं गुरुवों की पूजा करने पर इसलिये गुरु पूज्यतम कहाते हैं॥३॥

श्रीनारद पञ्चरात्र में--

महाकुलप्रसूतोपि सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ।
सहस्रशाखाध्यायी च न गुरुः स्यादवैष्णवः ।।४ ।।

भाषा-उत्तम ब्राह्मण कुल में उत्पन्न सर्व यज्ञों में दीक्षित एवं वेदों के हजार शाखावों के पढने वाला होय यदि वह वैष्णव नहीं है तो गुरु नहीं हो सकता है॥३॥

अवैष्णवोपदिष्टेन मन्त्रेण निरयं व्रजेत् ।
पुनश्च विधिना सम्यग्वैष्णवाद् ग्राहयेन्मनुम् ।।५ ।।

भाषा-अवैष्णव से विष्णु दीक्षा लेने से शिष्य नरक को जाता है। यदि अवैष्णव से वैष्णव मन्त्र लिया होय तो पुनः विधि के सहित वैष्णव से मन्त्रोपदेश लेवे॥५॥

पद्म पुरराण में--

सम्प्रदायविहीना ये मन्त्रास्ते निष्फला मताः ।
परम्परागता ये तु ते कृष्णकरुणान्विताः ।।६ ।।

भाषा-भगवद्विषयक अनेक मन्त्र हैं, जिस मन्त्र का सम्प्रदाय उपदेश नहीं होता है वह मन्त्र निष्फल है। जिस मन्त्र का सम्प्रदाय की गुरु परम्परा से उपदेश होता आता है, वह मन्त्र श्रीकृष्ण कृपा से युक्त हैं, अर्थात् उस मन्त्र को गुरु से लेने पर परम फल लाभ होता है॥६

तन्त्र में--

अदीक्षिताये कुर्वन्ति जपहोमादिकाः क्रियाः ।
न भवन्ति प्रिये तेषां शिलायामुप्तवीजवत् ।।७।।

भाषा-श्रीशिवजी पार्वतीजी से कहते हैं कि, हे प्रिये जो मनुष्य गुरु से मन्त्रोपदेश न लेकर जप पूजा कर्म करता है उसके वे सर्व कर्म निष्फल होते हैं जैसे पाषाण के ऊपर बीज बोने से निष्फल होता है। भाव यह है कि जिस देव का आराधन किया जायगा उस देव के मूल मन्त्र से किया जायगा जो मन्त्र गुरु से लाभ होता है वह मूल मन्त्र कहा जाता है। किसी पुस्तक आदि में से अभ्यास कर लेने से मन्त्र निष्फल है, इस लिये गुरु मन्त्र लेना आवश्यक है।

अदीक्षितस्य वामोरु कृतं सर्वं निरर्थकम् ।
पशुयोनिमवाप्नोति दीक्षाहीनो मृतो नरः ।।८।।

भाषा-हे वामोरु जो गुरु से दीक्षा नहीं लिया उसके सर्व शुभ कर्म किया निष्फल हैं। दीक्षा हीन पुरुष मरने के बाद बैल भैंसा आदि बनता है॥८॥

इति दीक्षा निर्णय ।

भाषा-श्रीविष्णु के आराधन के अङ्ग पञ्च संस्कार होते हैं वे संस्कार गुरु से मिलते हैं पञ्च संस्कार के बिना विष्णु के आराधन नहीं होता है।

पञ्चरात्र में और पद्म पुराण में--

तापः पुण्ड्रं तथा नाम मन्त्रो यागश्च पञ्चमः ।
अमी हि पञ्चसंस्काराः परमैकान्तहेतवः ।।९।।

भाषा-शंख चक्र धारण, ऊर्ध्व पुंड्र तिलक, शिष्य के भगवत सम्बन्धी नाम धारण, रामशरण, कृष्णशरण, रामदास कृष्णदास विष्णुदास इत्यादि गृहस्थ विरक्त सव के लिये है, ३ मन्त्रोपदेश ४ तुलसी कण्ठी धारण, विष्णु के ध्यान पूजनोपदेश ५ ये ही पञ्च-संस्कार मोक्ष के कारण हैं। पहले ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक शंख-चक्र धारण, तुलसी कण्ठी धारण, मन्त्रोपदेश, भगवत्-सम्बन्धी नामकरण विष्णु अर्थात् भगवान् श्रीकृष्ण का ध्यान पूजनोपदेश यह क्रम विहित किया गया है॥८॥

अथ ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक संस्कारः

पद्मपुराण उत्तर खंड--

ऊर्ध्वपुण्ड्रधरो विप्रः सर्वलोकेषु पूजितः।
विमानवरमारुह्य याति विष्णोः परं पदम्॥१०॥

भाषा-ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक करने वाला ब्राह्मण सर्व लोकों में पूजित है, शरीर त्यागने के बाद उत्तम विमान पर चढ कर विष्णु के स्थान को जाता है॥१०॥

ऊर्ध्वपुण्ड्रधरं विप्रं यः श्राद्धे भोजयिष्यति।
आकल्पकोटिपितरः तस्य तृप्ता न संशयः॥११॥

भाषा-ऊर्ध्व पुंड्र तिलक किये हुये ब्राह्मण को जो श्राद्ध में भोजन कराता है उसके पितृगण कोटि कल्प तक तृप्त रहते हैं यह बात निश्चित है॥११॥

ऊर्ध्वपुण्ड्रधरो यस्तु कुर्याच्छाद्धं शुभानने।
कोटिकल्पसहस्राणि वैकुण्ठे वासमाप्नुयात्॥१२॥

भाषा-श्रीशिवजी कहते हैं, हे शुभानने पार्वति ऊर्ध्व पुंड्र तिलक धारण कर जो श्राद्ध करता है वह हजार कोटि कल्प तक वैकुण्ठ में निवास करता है॥१२॥

ब्रह्म पुराण में--

अशुचिर्वाप्यनाचारो मनसा पापमाचरन्।
शुचिरेव भवेन्नित्यमूर्ध्वपुण्ड्राङ्कितो नरः॥१३॥

भाषा-अपवित्र होय अथवा आचार से रहित हो या मन से पाप करने वाला होय ऊर्ध्व पुंड्र तिलक धारण करने से निरन्तर पवित्र होता है॥१३॥

ऊर्ध्व पुण्ड्रधरो मर्त्योम्रियते यत्र कुत्रचित्।
श्वपाकोपि विमानस्थो मम लोकेमहीयते॥१४॥

भाषा-भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि ऊर्ध्व पुंड्र तिलक धारण करने वाला शरीर त्याग किसी जगह करे मेरे धाम को पहुँचता है। ऊर्ध्व पुंड्र धारण करने वाला श्वपच अर्थात् निम्नवर्ग का व्यक्ति भी विमान पर चढ कर मेरे धाम को जाता है॥१४॥

इति ऊर्ध्व पुंड्र महात्म्यम्।

अथोर्ध्वपुण्ड्र स्वरूपम्

भगवान् स्वयं सनत्कुमारों के प्रति कहते हैं--

नासिकामूलमारभ्य ललाटान्तसमन्वितम्।
साधिकांगुलान्तरालमधिकं तूत्तरोत्तरम्॥१५॥
रेखाद्वयविनिर्मितं समृजुं हरिमन्दिरम्।
व्रीहिमात्रं पृथुं पार्श्वे चतुरंगुललम्बकम्॥१६॥

भाषा-त्रिभागो मूलमुच्यते। नासिका के दो भाग को

छोड़कर ऊपर मूल कहाता है। नाशिका के दो भाग छोड़कर तीसरा भाग से लेकर ललाट से केशपर्यन्त एक अंगुल से कम बीच में छोटा न होय अर्थात् दो अंगुल बीच में दूरी होय॥१५॥

भाषा-इस तरह दो रेखा बनावे सुन्दर, चावल धान प्रमाण पतला होय नीचे पार्श्वगल कुछ मोटा होय ६ अङ्गुल लम्बा होय इसका नाम हरि मन्दिर है॥१६॥

पद्म पुराण में--

एकान्तिनो महाभागाः सर्वभूतहिते रताः।
सान्तरालं प्रकुर्वन्ति पुण्ड्रं हरिपदाकृतिम्॥१७॥

भाषा-मोक्षार्थी महा भाग्यवान् सर्व जीवों के कल्याण करने वाले मध्य छिद्र के सहित ऊर्ध्व पुण्ड्र करते हैं वह ऊर्ध्व पुण्ड्र हरिपदा कृति कहाता है॥१७॥

हरेः पादाकृतिधार्य्यमूर्ध्वपुण्ड्रं विधानतः।
मध्यच्छिद्रेण संयुक्तं तद्धि वै हरिमन्दिरम्॥१८॥

भाषा-हरि के पादाकृति ऊर्ध्व पुंड्र तिलक विधि से धारण करना चाहिये, सो विधि आगे कहेंगे। मध्य छिद्र के सहित ऊर्ध्व पुंड्र हरि मन्दिर है। इससे एक ऊर्ध्व पुंड्र तिलक हरि मन्दिर और हरि पादाकृति कहाता है॥१८॥

हरे पादाकृतिमात्मनो हिताय मध्यच्छिद्रमूर्ध्वपुड्रं यो धारयति स परस्य प्रियो भवति स पुण्यवान्भवति स मुक्तिभाग्वति। इति ॥१८॥

यजुर्वेद के हिरण्य केशि शाखा में और अथर्वण वेद के याज्ञवल्क्योपनिषद् में। अपने आत्मा के हित के लिये मध्य छिद्र

वाला हरिपदाकृति ऊर्ध्व पुंड्र तिलक को जो धारण करता है वह परब्रह्म को प्रिय पुण्य मुक्ति का भागी होता है॥१८॥

ब्रह्म पुराण में--

निरन्तरालं यः कर्यादुर्ध्वपुण्ड्रं द्विजाधमः ।
स हि तत्र स्थितं विष्णुं लक्ष्मीं चैव व्यपोहति ।।१८ ।।

भाषा-जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य दोनों रेखा मिलाकर बीच में अन्तर न देकर ऊर्ध्वपुंड्र तिलक करता है वह अधम है। क्योंकि उसे अधम निर्दिष्ट किया गया है, वह दोनों रेखा के मध्य में रहने वाले विष्णु लक्ष्मी को त्यागता है। अतः मध्य में छिद्र न रहने से विन्दु कैसे रहेगा-बिन्दु स्वरूप ही तो लक्ष्मी विष्णु है। बिन्दु लक्ष्मी विष्णु स्वरूप है सो आगे कहते हैं॥१८॥

पद्म पुराण में--

ऊर्ध्व पुण्ड्रं मृदा कुर्यान्मध्ये शून्यं प्रकल्पयेत् ।*

भाषा-ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक मृत्तिका अर्थात् गोपीचन्दन से करैं मध्य में एक बिन्दु धरे। ज्योतिष् में शून्य बिन्दु कहाता है।*

कूर्म पुराण में--

कञ्जाकारं समं मध्ये धारयेद्हरिमन्दिरे ।।१९ ।।

भाषा-नेत्र के मध्य रहने वाला काला गोलक के तुल्य स्यामबिन्दु को हरि मन्दिर रूप ऊर्ध्व पुंड्र के मध्य धारण करैं। कैसा वह विन्दु है। समं, मया रमया सह वर्तत इति समःतं समं, लक्ष्मी विष्णु स्वरूप है।

उसी जगह श्रीनारदजी के वाक्य--

भ्रुवोर्मुक्ताकारसमं धारयेद्धरिमन्दिरं ।।

भाषा-ऊर्ध्व पुण्ड्रूरूप हरि मन्दिर में भ्रुवों के मध्य। मुक्ता-कार समं, मया रमया सह वर्तत इति समः, मुक्ताकारश्चासौ समः मुक्ताकार समः तं मुक्ताकार समं, छोटे मोति के तुल्य लक्ष्मी के सहित विष्णु को धारण करैं। इस वचन से भी भ्रुवों के मध्य स्यामबिन्दु लक्ष्मी बिन्दु स्वरूप है।*

पद्म पुराण में--

ऊर्ध्वपुण्ड्रस्य मध्ये तु विशालेषु मनोहरे।
सान्तराले समासीनो हरिस्तत्र श्रिया सह।।२१।।

भाषा-अन्तराल अर्थात् कुछ दूरी वाला विशाल सुन्दर ऊर्ध्वपुंड्र के मध्य समासीनः, मया लक्ष्म्या सह वर्तते इति समः, सम आसीनः समासीनः, हरिः। लक्ष्मी के सहित हरि स्थित हैं। और श्रिया सह हरिरासीनः, श्री के सहित हरि स्थित हैं। यहाँ लक्ष्मी और श्री के सहित हरि ऊर्ध्वपुंड्र के मध्य विराजमान होते हैं, सो श्री शब्द से श्रीराधिकाजी का ग्रहण है (श्रीश्चलक्ष्मीश्च ते पत्न्या पुरुषसूक्त) हे विष्णो आपके श्री और लक्ष्मी दोनों पत्नी हैं। इस श्रुति में लक्ष्मी से अन्य श्री हैं। श्री शब्द का अर्थ श्रीराधिकाजी हैं। लक्ष्मी ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री है श्री शब्द का अर्थ राधिका प्रेम की अधिष्ठात्री हैं लक्ष्मी में प्रेम करने से ऐश्वर्य प्राप्त होता है राधिका में प्रेम होने से हरि में प्रीति होती है। ऐश्वर्य और प्रेम के स्वामी श्री हरि हैं वे दोनों खजाञ्ची हैं प्रेम की चाहना करने वाले राधाकृष्ण कहते हैं, लक्ष्मी कृष्ण नहीं कहते हैं। एक स्याम बिन्दु लक्ष्मी राधा हरि तीनों स्वरूप सिद्ध है। शंका-एक स्याम बिन्दु लक्ष्मी स्वरूप कहै अथवा राधा स्वरूप कहैं अथवा हरि स्वरूप कहैं एक बिन्दु

तीनों स्वरूप कैसे हो सकता है। उत्तर जैसे एक शालग्राम पाषाण-विग्रह राधाकृष्ण सीताराम लक्ष्मीनारायण कहाते हैं उसी प्रकार एक स्याम बिन्दु लक्ष्मी राधाहरि स्वरूप है। इस बिन्दु का नाम स्याम श्री है, स्याम के सहित राधिका स्याम श्री हैं अथवा स्याम स्वरूप होने से स्याम श्री है। विस्तार के भय से इस कथा को संक्षेप से लिखा ॥२१॥

नारद पञ्चरात्र में--

कज्जलस्य गिरेश्चैव राधाकुण्डविशेषतः ।

भाषा-जगन्नाथ पुरी के पास कज्जल गिरि है, व्रज में गिरिराज पर्वत के तरेटी में राधाकुण्ड है। राधाकुण्ड की मृतिका से स्यामश्री करै, अर्थात् स्यामबिन्दु मस्तक में धरे। राधाकुण्ड के मृत्तिका न लाभ होने से कज्जल गिरिपाषाण से धरे। कज्जलगिरि पाषाण न लाभ होने से सुपारी जलाकर भगवान् के प्रसादी कणिका मात्र चन्दन तुलसी जली सुपारी में छोड़कर मिश्री देकर खूब घोटकर डिब्बा में रख लेवें रोज करे।

* इति तिलक स्वरूप निर्णयः *

अथ तिलक विधि--

पद्म पुराण उतर खण्ड में--

ललाटे केशवं ध्यायेन्नारायणमथोदरे ।
वक्षः स्थले माधवं च गोविन्दं कङ्ठकूपके ।।२२।।
विष्णुं च दक्षिणे कुक्षौ बाहौ च मधुसूदनम् ।
त्रिविक्रमं कन्धरे च वामनं वामपार्श्वके ।।२३।।

पृष्ठे तु पद्मनाभं च कट्यां दामोदरं न्यसेत् ।
तत्प्रक्षालनतोयेन वासुदेवं तु मूर्द्धनि ।।२४।।

भाषा-ललाट में, केशवाय नमः। उदर में, नारायणाय नमः। वक्षस्थल में, माधवाय नमः। कण्ठ में, गोविन्दाय नमः। दक्षिण कुक्षि में, विष्णवे नमः। बाहों में, मधुसूदनाय नमः। कन्धों में, त्रिविक्रमाय नमः। वामपार्श्व में, वामनाय नमः। पीठ में, पद्मनाभाय नमः। कटि में दामोदराय नमः। उसके बाद हाथ धोकर उस जल को लेकर मस्तक में वासुदेवाय नमः। इन भगवान् के नामों से द्वादश तिलक करना चाहिये॥२२,२३,२४॥

स्कन्द पुराण में--

ब्रह्मन् द्वादशपुण्ड्राणि ब्राह्मणः सततं धरेत् ।
चत्वारि भूभृतां पुत्र पुण्ड्राणि द्वे विशां स्मृतम् ।।२५।।*
एकं पुण्ड्रं च नारीणां शूद्राणां च विधीयते ।*

भाषा-ब्राह्मण उक्त द्वादश तिलक करैं। क्षत्रिय ललाट कंठ में स्कन्धों में चार जगह तिलक करैं। वैश्य ललाट कण्ठ में दो जगह तिलक करै। शूद्र और स्त्री ललाट में एक तिलक करैं॥२५॥*

पद्म पुराण में--

यज्ञोदानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम् ।।२७।।
व्यर्थं भवति तत्सर्वमूर्ध्वपुण्ड्रंविना कृतम् ।
तत्सर्वं राक्षसं सत्यंनरकं घोरमाप्नुयात् ।।२८।।

भाषा-बिना ऊर्ध्वपुंड्र तिलक किये यज्ञ दान तप होम वेद पढना पितृजनों के तर्पण वे सब शुभकर्म निष्फल होते हैं। ऊर्ध्वपुंड्र के बिना वे सर्व कर्म के फल राजा वलि को मिलता है, इसलिये राक्षस

कहाता है। कर्म के फल न मिलने से घोर नरक में जाता है॥२८॥

पद्म पुराण में कृष्ण वचन--

मत्पूजा होमकाले च सायं प्रातः समाहितः।
मद्भक्तो धारयेन्नित्यमूर्ध्वपुण्ड्रं भयापहम्॥२९॥

भाषा-मेरी पूजा होम काल में प्रातः एवं सायंकाल में भय दूर करने वाला ऊर्ध्वपुंड्र तिलक को प्रतिदिन मेरे भक्त धारण करैं॥२९॥

तिलक करने के लिये अंगुलि के फल

स्मृति--

अनामिका कामदा प्रोक्ता मध्यमायुः करी भवेत्।
अंगुष्ठः पुष्टिदः प्रोक्तस्तर्जनी मोक्षदायिनी॥३०॥

भाषा-सब से छोटी अंगुली के पास रहने वाली अंगुलि अनामिका कहाती है। मध्य की बड़ी अंगुली मध्यमा कहाती है अंगुष्ठे के पास रहने वाली अंगुली तर्जनी कहाती है, अनामिका से तिलक करने से मनोरथ पूर्ण होता है। मध्यमा से तिलक करने से आयु की वृद्धि होती है। अंगुष्ठा से तिलक करने से शरीर की पुष्टी होती है। तर्जनी से तिलक करने से मोक्ष होता है।

अथ तिलकार्थं द्रव्य निर्णयः

ब्रह्म पुराण में--

शालग्रामशिलालग्नं चन्दनं धारयेत्सदा।
सर्वांगेषु महाशुद्धिशिद्धये कमलासन॥३१॥

भाषा-भगवान् कहते हैं ब्रह्मा से हे कमलासन ! शालग्राम-

पाषाण विग्रह से उतारा हुआ चन्दन को महा पवित्रता के लिये अपने सर्व शरीरों में धारण करना चाहिये, इस चन्दन के धारण करने से लाख दफे गंगा स्नान के फल तुल्य हो सकता है॥३१

भविष्योत्तर पुराण में--

यस्याङ्गं धूपशेषेण मार्जितं प्रत्यहं हरेः ।
ललाटं धूपपुण्ड्रं वा यमस्यापि यमो हि सः ॥३२॥
धारको धूपशेषस्य यत्र तिष्ठति मत्प्रियः ।
तत्प्रयागसमं विद्धि त्रिवेण्या सदृशो हि सः ॥३३॥
धारिणं धूपशेषस्य यो निन्दति नराधमः ।
स यमस्य वशे गन्ता मद्द्रोही भविता नरः ॥३४॥

भाषा-हरि के धूप करने के बाद जो भस्म अर्थात् राख है उसको अपने अङ्ग में लगाता है, अथवा प्रतिदिन उस राख से ऊर्ध्वपुंड्र तिलक करता है वह पुरुष यमराज के भी यमराज हैं, यमराज उससे भयभीत रहते हैं॥३२॥ उस धूप "राख" को धारण करने वाला भगवान् को प्रिय है, भगवान् स्वयं कहते हैं वह जिस स्थान पर रहता है वह स्थान प्रयाग के तुल्य जाने, और वह भक्त त्रिवेणी तुल्य है। प्रयाग में गंगा, यमुना, सरस्वती के संगम त्रिवेणी है। तैसे उस भक्त के रहने की भूमि प्रयाग हैं, वह स्वयं त्रिवेणी रूप है उसके दर्शन से ही कल्याण है॥३३॥ उस धूप को धारण करने वाले की जो निन्दा करता है, वह नराधम है, यमराज के गृह वास करेगा मेरा द्रोही है॥३४॥

गरुड़ पुराण में--

तुलसी मृत्तिका पुण्ड्रं यः करोतिदिनेदिने ।

तस्यावलोकनात्पापं याति वर्षकृतं नृणाम् ।।३५ ।।

भाषा-तुलसी के नीचे की मृत्तिका से तिलक जो नित्य करता है, उसके दर्शन से मनुष्यों का वर्ष मात्र के किया पाप दूर होता है॥३५॥

पद्म पुराण में--

पर्वतादौ नदीतीरे विल्वमूले जलाशये ।
सिन्धुतीरे च वल्मीके हरिक्षेत्रे विशेषतः ।।३६ ।।
विष्णोः पादोदकं यत्र प्रवाहयति नित्यशः ।
पुण्ड्राणां धारणार्थाय गृहणीयात्तत्र मृत्तिकाम् ।।३७ ।।
श्रीरंगे वेंकटाद्रौ च श्रीकूर्मे द्वारकेशुभे ।
प्रयागे नारसिंहाद्रौ वाराहतुलसीवने ।।३८ ।।
धृत्वा पुण्ड्राणि चाङ्गेषु विष्णुसायुज्यमाप्नुयात् ।।३९ ।।

भाषा-पर्वत नदी तीर विल्व वृक्ष के जड़ जलाशय समुद्र तीर बम्वी व्यमउट हरि के क्षेत्र जिस प्रणाली (नाली) से निरन्तर विष्णु के मन्दिर के जल बहता है उस प्रणाली के, इन जगहों से ऊर्ध्व पुंड्र धारण करने के लिये मृत्तिका ले आनी चाहिये, और श्रीरंग, वेंकट, गिरि कूर्म क्षेत्र, द्वारिका, प्रयाग, नारसिंहगिरि, वाराह क्षेत्र, वृन्दावन अथवा तुलसी वृक्षोंके जंगल। इन समस्त स्थानों से मृत्तिका लाकर श्रद्धा से विष्णु के चरणोदक जल से पाशा बना कर रख लेंवे। प्रतिदिन उससे अपने शरीर में ऊर्ध्व पुंड्र तिलक करैं, इस तरह करने से विष्णु के सायुज्य मोक्ष को प्राप्त होता है॥३६-३९॥

इन सर्व मृत्तिकाओं से अधिक महत्व गोपीचन्दन का है

पद्म पुराण में--

ब्रह्मघ्नो वाऽथ गोघ्नो वा हेतुकः सर्वपापकृत्।
गोपीचन्दनसम्पर्कात्पूतो भवति तत्क्षणात्।।४०।।
गोपीचन्दनलिप्तांगो दृष्टश्चेत्तदघं कुतः।
गोपीमृत्तुलसी शंखः शालग्रामः सचक्रकः।।४१।।
गृहेपि यस्य पञ्चैते तस्य पापभयं कुतः।*

भाषा-कदाचित् अज्ञानतावश अथवा दुस्सङ्गपरायणता वश या अन्धकार में किसी भ्रान्तिवश ब्राह्मण को मारने वाला गौ को मारने वाला सर्व पाप को करने वाला मनुष्य अपने शरीर में गोपी-चन्दन लगाता है तो उसी काल सर्व पापों से छूट जाता है॥४०॥ गोपीचन्दन तुलसी शंख चक्र शालग्राम भगवान् ये पाञ्च जिसके गृह में रहते हैं वह पाप से निवृत्त हो जाता है किन्तु ध्यान रहे यहाँ पर गोपीचन्दन का माहात्म्य वर्णित किया गया है। इस वचन से कोई अज्ञानी ऐसा विपरीत महागर्ह्य घोर कर्म न करले॥४१॥*

गरुड पुराण में श्रीनारदजी के वचन--

यो मृत्तिकां द्वारवतीसमुद्भवां करे समादाय ललाटके बुधः। करोति नित्यं त्वथचोर्ध्वपुण्ड्रकं क्रियाफलं कोटिगुणं तदा भवेत्।।४२।।

क्रियाविहीनं यदि मन्त्रहीनं श्रद्धाविहीनं यदि कालवर्जितम्। कृत्वा ललाटे यदि गोपीचन्दनं प्राप्नोति

तत्कर्मफलं सदाक्षयम् ।।४३ ।।

भाषा-जो मनुष्य द्वारका में उत्पन्न गोपीचन्दन मृत्तिका को हाथ में लेकर ललाट में प्रतिदिन ऊर्ध्वपुंड्र तिलक कर शुभ कर्म को करता है, उसके उस कर्म के फल कोटि गुणा अधिक होता है॥४२॥

भाषा-क्रिया से हीन होय मन्त्र से हीन होय श्रद्धा से हीन होय समय पर कर्म करने वाला न होय यदि ललाट में गोपीचन्दन लगाकर शुभ कर्म करता है तो उस कर्म के अक्षय फल को पाता है॥४३॥

काशी खंड में यमराज वचन--

दूता ! शृणुत यद्भालं गोपीचन्दनलाञ्छितम् ।
ज्वलदिन्धनवत्सोपि दूरे त्याज्यः प्रयत्नतः ।।४४ ।।

भाषा-यमराज अपने दूतो से कहते हैं कि हे दूतों तुम लोग सुनो ! जिसके मस्तक में गोपीचन्दन लगा है, वह आग में जली हुई लकड़ी के तुल्य है, उसको दूर से त्याग देना, पास जावोगे तो जल जावोगे॥४४॥

गोपीचन्दनपंकेन ललाटे यस्तु लेपयेत् ।
एकदण्डी त्रिदण्डी वा स वै मोक्षं समश्नुते ।।४५ ।।

भाषा-गोपीचन्द पंक से ललाट में जो लेप करता है, वह मोक्ष को प्राप्त होता है, एक दंडी अथवा त्रिदंडी सन्यासी होय॥४५॥

वासुदेव उपनिषद् में--

तदुहोवाच भगवान् वासुदेवो वैकुठस्थानोद्भवं मम प्रीतिकरं मम भक्तैर्ब्रह्मादिभिर्धारितं विष्णुचन्दनं ममांगे

प्रतिदिनमालिप्तं गोपीभिः प्रक्षालनाद् गोपीचन्दनमाख्यातं मदङ्गलेपनं पुण्यं चक्रतीर्थादिसंस्थितं शंखचक्रसमायुक्तं पीतवर्ण मुक्तिसाधनं भवति ।।४६ ।।

भाषा-भगवान् वासुदेव बोले, वैकुण्ठ स्थान से उत्पन्न मेरे में प्रीति को बढाने वाला मेरे भक्त ब्रह्मादि देवों ने मेरे शरीर में धारण किया विष्णु, चन्दन मेरे अङ्ग में प्रतिदिन धारण किया हुआ था, गोपियों ने मेरे अङ्ग से उस चन्दन को धोया है, इसलिये गोपीचन्दन कहाता है, मेरे अंग के लेपन किये हुए पवित्र पाप नाश करने वाला चक्रतीर्थादि में रहता है शंखचक्रों से चिह्नित है, पीत वर्ण मुक्ति का दाता है। इस चन्दन का नाम विष्णु चन्दन और गोपीचन्दन हैं, वेतद्वारिका से तीन कोस की दूरी पर गोपी तलाब के नाम से चक्रतीर्थ है, उसी जगह वर्तमान है। इस चन्दन को खोदने से उसमें शंखखक्र के चिह्न दृश्य होता है॥४४॥

ब्राह्मणानां तु सर्वेषां वैदिकानामनुत्तमम् ।
गोपीचन्दनवारिस्थमूर्ध्वपुण्ड्रं विधीयते ।।४७ ।।

भाषा-भगवान् वासुदेव कहते हैं कि वैदिक सर्व ब्राह्मणों को सर्व चन्दनों से उत्तम गोपीचन्दन से जल मिला कर ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक करने का विधान है॥४७॥

वाष्कल संहिता में--

गोपीचन्दन को नमस्कार प्रार्थनामन्त्र--

गोपीचन्दन पापघ्न विष्णुदेहसमुद्भव ।
चक्राङ्कित नमस्तुभ्यं धारणान्मुक्तिदो भव ।।४८ ।।

भाषा-पापों का नाश करने वाला विष्णु देह से उत्पन्न

चक्र से चिह्नित गोपीचन्दन आपको दण्डवत्प्रणाम करता हूं, मस्तक में धारण करने से मुक्ति दाता होवे। इस तरह प्रार्थना कर गोपीचन्दन से तिलक करना चाहिये॥४८॥

इति श्रीनैष्ठिकब्रह्मचारिणा श्रीनिम्बार्कपादपद्माश्रितेन
श्रीवैष्णवदास शास्त्रिणा हिन्दिभाषया
प्रथमऊर्ध्वपुण्ड्रतिलकसंस्कारः
संगृहीतः॥१॥

कितने मूर्ख अशिक्षित वा विद्वान् आक्षेप करते हैं कि शङ्ख चक्र धारण का वेद में कहाँ लेख है और शङ्ख चक्र धारण करने से पतित होता है। इन सब के अज्ञान दूर होने के लिये पहिले शङ्ख चक्रं धारण में वेद प्रमाण दिखा कर पौराणिक प्रमाण दिखाया जायेगा।

धृतोर्ध्वपुण्ड्रः कृतचक्रधारी विष्णुं परं ध्यायति यो महात्मा । स्वरेण मन्त्रेण सदा हृदिस्थितं परात्परं यन्महतोमहान्तम्। यजुर्वेद, कठशाखा,, ३ प्रश्न, ३अनुवाकः ।

भाषा-जो भगवद्-भक्त मस्तक में ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक धारण कर बाहों में शंख चक्र धारण करे।

परंचिदचिद्भ्यां स्वरूपेण धर्मेणोत्कृष्टं पुनः कथंभूतं परात्परं, चेतनाख्या तथा परा इति चेतनरूपाचिच्छक्तेरुत्कृष्टशक्तिमन्तं पुनः महतोमहान्तं, अचिच्छक्तिश्चिच्छक्त्यापेक्षया स्थूलस्वरूपतया महच्छब्देन वा व्यवह्रियते ततो

महान्तं स्वरूपधर्माभ्यामुत्कृष्टं पुनर्हृदि-स्थितं हत्पुण्डरीके श्रीभूलीलादेवीभिः सह स्थितं विष्णुं कृष्णस्वरूपं, सर्वस्य चाहं हृदिसन्निविष्ट इति, ध्यायति, मानसपूजां वा ध्यानं करोति। स्वरेण वेदभारतपञ्चरात्रमूलरामायणादीनवलंब्य पाठस्तुत्यादिकं करोतित्यर्थः मन्त्रेण गुरुपदिष्टमन्त्रेण उपांशु-मानसं वा जपति स महात्मा प्रकृतिसम्बन्धशून्यमोक्षी-भवतीत्यर्थः।

भाषा-पर शब्द चित् नाम जीव अचित् नाम प्राकृत वे दोनों भगवान् की शक्तियाँ हैं वे दोनों से उत्तम परात्पर अचित् शक्ति से पर चित् शक्ति हैं। विष्णु पुराण में कहा है कि चेतन शक्ति पर है। चेतन शक्ति से प्रबल शक्ति वाला महतोमहान्तं अचित् शक्ति चित् शक्ति के अपेक्षा से स्थूल होने से महत् है उस महत् से महत् नाम व्यापक स्वरूप और धर्म से। हृदिस्थितं हृदय में स्थित कमल के मध्य विराजमान श्री भूलीलादेवीयों के सहित। विष्णुं कृष्ण के, गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है, सव के हृदय में मैं रहता हूँ। स्वरेण, वेद भारत पञ्चरात्र वाल्मीकीय रामायणादिकों को लेकर स्वरूप धर्म चरितादिकों की कीर्तनादि करता है। मन्त्रेण, गुरु से लब्ध मन्त्र को उपांशु वा मानस जप करता है। षष्ठ्यर्थ में तृतीया है। स महात्मा प्रकृति सम्बन्ध निवृत्ति पूर्वक भगवद्भावापत्ति-रूपमोक्ष को लाभ करता है। विष्णु शब्द का अर्थ व्यापक हैं। तीन तरह से भगवान् उपास्य हैं अन्तर्यामी, सत्चित् आनन्द विग्रह, सर्वात्म स्वरूप। यहाँ हृदय में स्थित कमल के मध्य सत् चित् आनन्द अंगुष्ठ मात्र स्वरूप की उपासना श्रुति कहती है, विस्तार

भय से स्वल्प कहा है॥१॥

सामवेद के मैत्रायणीय शाखा में--

पवित्रं वैअग्निरग्निर्वै सहस्रारः सहस्रारोनेमिर्नेमिनातप्त-तनुर्ब्राह्मणः सायुज्यं सालोकतामाप्नोति। साममैत्रायणी ३ शाखाः ३ खण्ड०॥

भाषा-पवित्रं पवित्र है, इसलिये अग्नि है। लोक में अग्नि पवित्र करती है आगे श्रुति स्पष्ट करती है। अग्निर्वै सहस्रारः, अग्नि सुदर्शन है। सहस्रारनेमिः सहस्रं अराणि नेमौ यस्यसः सहस्रारनेमिः। और कैसा सुदर्शन है हजार अर जिस के नेमि में है। नेमिनातप्ततनु-र्ब्राह्मणः, नेमि से तप्त शरीर ब्राह्मण, सायुज्यं सालोकतामाप्नोति। सायुज्य सालोक्य मोक्ष को प्राप्त होता है॥२॥

अथर्वण रहस्य कौशकेयी शाखा में--

चक्रं बिभर्त्तिवपुषाभितप्तं बलंदेवानाममितस्यविष्णोः।
स एतिनाकं दुरिता विधूय प्रयान्तियद्यतयोवीतरागाः॥

अथर्वण रहस्य के ५ ब्राह्मण - अध्या ८।

भाषा-देवानां एकवचनस्थाने बहुवचनं देवस्येत्यर्थः। देवस्यामितस्यविष्णोः, देव अपरिमित व्यापक स्वरूप विष्णु के बलं आयुधं, अभितप्तं संस्कारेण वह्नौ तापितं चक्रं चक्रराजं सुदर्शनं वपुषाविभर्ति, शरीर से धारण करता है। सः धारकः धारण करने वाला। दुरिता इति दुरितान् विधूय शुभाशुभ कर्मों को त्याग कर नाकं एति, मोक्ष को प्राप्त होता है। नाक शब्दार्थ श्रुति कहती है। यत् यत्र जिस जगह, वीतरागायतयो विशन्ति। इस लोक पर लोक भोगवासनारहित यतयः इन्द्रियों को दमन करने वाले सर्व कर्म

त्याग कर विशन्ति यान्ति दोनों पाठ हैं, प्राप्त होते हैं। यह श्रुति ऋग्वेद के वाष्कल संहिता में भी है॥३॥

अथर्वण रहस्य कौशकेयी शाखा में--

एभिरुरुक्रमस्यचिह्नैरङ्किता लोके सुभगा भवामः।
तद्विष्णोः परमं पदं ये गच्छन्ति लाञ्छिताः॥

भाषा-उरु क्रमस्य विष्णोः, उरु क्रम नाम विष्णु के एभिर्चिह्नैः, शंखचक्र चिह्नैः शखचक्र के चिह्नों से अङ्किताभुजयोरित्यर्थः भुजों में अङ्कित लोके सुभगा भवामः, वयमित्यर्थः। संसार में हम लोग पुण्य के भागी हो गये। ये लाञ्छिताः शंखचक्र धारिणः शंखचक्र धारण करने वाले गच्छन्ति यत्रेतिशेषः जाते हैं जहाँ, तद्विष्णोः परमं पदं, वही विष्णु का परम पद स्थान हैं॥४॥

शुल्क यजुर्वेद में वाजसनेयी उक्त शतपथ ब्राह्मण में--

कात्यायिनी पप्रच्छयाज्ञवल्क्येतिहोवाच देवासः पितरोयेनविधृतेन बाहुना सुदर्शनेन प्रयाताः स्वर्गलोकमायान्ति येनाङ्किता मनवो लोकसृष्टिं वितन्वन्ति ब्राह्मणास्तद्वहन्ति। अग्निनावै होता तप्तं चक्रं द्विभुजेधार्य्यमित्यूर्ध्व पुण्ड्रमालिखेत्तस्माद् द्विरेखा भवति पुनरागमनं न याति ब्राह्मणः सायुज्यं सालोकतां जयति यएवंवेद।

अनुवाक ६॥

भाषा-कात्यायनी ने याज्ञवल्क्य से पूछा। याज्ञवल्क्य इति होवाच याज्ञवल्क्य कहते हैं, देव पितृगण जिस सुदर्शन के बाहु में धारण करने से स्वर्ग में निवास करते हैं, जिस सुदर्शन के धारण बाहों में करने से मनु लोकों की पालना करते हैं, ब्राह्मण

अपने बाहों में धारण करते हैं। अग्नि से तप्त सुदर्शन को होता धारण करें, बाद मस्तकादिकों में ऊर्ध्व पुण्ड्र धारण करने से ऊर्ध्व पुण्ड्र में खडी दो रेखा होती हैं, इस तरह चक्रादि ऊर्ध्व पुण्ड्र धारण करने से फिर संसार में जन्म नहीं होता है, ब्राह्मण सायुज्य सालोक्य मोक्ष को प्राप्त होता है। जो इस तरह जानता है, सो भी मोक्ष को प्राप्त होता है॥५॥

यजुर्वेद के कठशाखा में--

चरणं पवित्रं विततं पुराणं येन पूतस्तरति दुष्कृतानि।
येन पवित्रेण शुद्धेन पूता अतिपाम्मानमरातिं तरेम।

प्रश्न ३ अनुवादक ३॥

सुदर्शनस्य, चरणं चिह्नं पवित्रं पापनाशनं विततं सर्वलोकेषु प्रसिद्धं व्याप्तं वा, पुराणं ब्रह्मादिदेवैर्धारितं अतएव पुराणं, येन सुदर्शनेन, धारणेन पूतः पवित्रीभूतः, जनः। दुष्कृतानि पापानि तरति। तेन सुदर्शनेन पवित्रेण पापनिवर्तकेन शुद्धेन अग्निनातप्तेन पूता बाहौ धारणेन पवित्री भूता वयमितिशेषः। अति पाप्मानं दुःखहेतुं अरातिं संसारं तरेम।

भाषा-सुदर्शन के चिह्न पाप नाशक समस्त लोकों में प्रसिद्ध व्यास ब्रह्मादि देव धारण किये हैं, इसलिये पुराण है। जिस सुदर्शन के धारण से पवित्र जन पापों से निवृत्त होता है। पाप नाश करने वाले अग्नि से तप्त सुदर्शन धारण से पवित्र हम लोम दुःख के कारण संसार को तर जावेंगे।

आथर्वाणिक सुदर्शनोपनिषद् विष्णु सूक्त में--

निचिक्षेप सुषणं विद्यमानं मध्येबाहुमदधत्सुदर्शनं, विष्णोरिदं भूरि तेजः प्रघर्षति दिवानक्तं बिभृयुस्तज्जनासः। निचिक्षेप सुषणं प्रहारेण शत्रूणां विधर्षणं विद्यमानंवेद शास्त्रादिषु प्रसिद्धं भूरि तेजः कोटिसूर्यपरिमिततेजः। दिवानक्तं दिवासूर्यस्य रात्रौ चन्द्रादीनां तेजः प्रधर्षति स्वतेजसा तिरस्करोति। एवं भूतं विष्णोरिदं सुदर्शनं मध्ये बाहु मध्ये अदधत्। देवाधृतवन्तः। जनासः जना लोके बाहु मध्ये बिभृयुः। धारणं कुर्वन्तु।

भाषा-प्रहार करने से शत्रुओं के विजय करने वाला वेद शास्त्रों में प्रसिद्ध कोटि सूर्य के तुल्य तेज वाला दिन में सूर्य के, रात्रि में चन्द्रादिकों के तेज को अपने तेज से तिरस्कार करने वाला- इस तरह विष्णु के ऐसे सुदर्शन को बाहु के मध्य देवता धारण करते हैं। मनुष्य लोक में बाहु मध्य धारण करें॥७॥

अथवर्ण महोपनिषद् ब्रह्मसूक्त में--

दक्षिणे तु भुजे विप्रो बिभृयाद्वै सुदर्शनं सव्यशंखं बिभृयाच्च इति वेदविदो विदुः। मन्त्र ८।।

भाषा-ब्राह्मण दक्षिण भुजा में चक्र धारण करें। वाम भुजा में शङ्ख धारण करें। ये ही वैदिकों का सिद्धान्त है॥८॥

ऋग्वेद में--

चमूषत् श्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुदृप्ता आयुधानि बिभ्रत्। अपामूर्मिंसचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषोविवक्ति अष्टक ७। अध्या ४ । मण्डल ६।

चमूषत्श्येनः शकुनइति पक्षिविशेषः। यदि, गोविन्दुः गोविन्दस्य दृप्ताआयुधानि अग्निनातप्तायुधानि चक्रादीन् विभृत्वा धृत्वा बिभ्रत् गच्छेत् शरीरं त्यक्त्वा इत्यर्थः अपामूर्मि समुद्रं जलानामाकरं समुद्रं तद्वत् जन्ममरणादि-षड्डर्मिमन्तं संसारसमुद्रं। सचमान उल्लंघ्यमानः तुरीयं धाम मोक्षधाम विवक्ति गच्छति। महिषः मनुष्यः यदि चक्रादीन् बिभृयात्तर्हि किं वक्तव्यम्।

भाषा-पक्षी यदि गोविन्द के अग्नि से तप्त चक्रादि को धारण कर शरीर त्याग कर जाता है तो जलों के खजाना समुद्र है, उसके तुल्य जन्म मरण ६ ऊर्मिवाला संसार समुद्र लांघते हुये मोक्ष धाम को जाता है। मनुष्य यदि चक्रादिकों को धारण करे तो क्या कहना॥६॥

ऋग्वेद वहवृचवाष्कल शाखा में--

प्रेते विष्णो अव्जचक्रे पवित्रे जन्माम्भोधिं तर्तवे चर्षणीन्द्राः मूलेबाह्वोर्दधते ऽन्येपुराणा लिङ्गान्यङ्गेतावकान्य-र्पयन्ति।

शाखा ३ अनुवाद ५।

हे विष्णो ते तव अब्जचक्रे पद्मचक्रे पवित्रे अग्निसंतप्ते संसारनिवर्तके वा जन्मांभोधितर्तवे, जन्ममरणादिस्थान संसारसागरतितीर्षवः। चर्षणीन्द्राः चर्षणयो मनुष्या इन्द्रोदेवः बाह्वो र्मूले दधते। अन्ये पुराणाः सनकादि भृगवादि महर्ष- यः हेअंगप्रेष्ठ विष्णो तावकानि चक्रादीनि लिंगानि चिह्नानि बाह्वोः मूले अपर्यन्ति अङ्कयन्ति।

भाषा-हे विष्णो आपके पद्म चक्र को अग्नि से तप्त संसार निवर्तक जन्म मरणादि के स्थान संसार सागर तरने की इच्छा वाले मनुष्य इन्द्र देव बाहों के मूल में धारण करते हैं और सनकादि भृग्वादिमहर्षि गण हे प्रिय विष्णो चक्रादि चिह्नों को बाहों के मूल पर अङ्कित करते हैं॥१०॥

यहाँ तक श्रुति प्रमाण शङ्ख चक्रादि धारण में दिखाया गया जिससे अन्धों के नेत्र पटल खुल जायें। अब पुराणादिकों के प्रमाण दिखाया जाता है।

पद्म पुराण में--

अग्निहोत्रं यथा नित्यं वेदस्याध्यनं यथा।
तथैवेदं ब्राह्मणस्य शंखचक्रादिधारणम् ।।११।।

भाषा-ब्राह्मण के जैसे अग्नि होत्र वेद को पढाना नित्य कर्म है, ऐसे ही शङ्ख चक्र धारण नित्य कर्म है॥११॥

गरुड पुराण में--

सर्वकर्माधिकारश्च शुचीनामेवचोदितः ।
शुचित्वं च विजानीयान्मदीयायुधधारणात् ।।१२।।

भाषा-पवित्रता सर्व कर्माधिकार के लिये कहा है। भगवान् कहते हैं कि मेरा आयुध शङ्ख चक्र धारण से पवित्रता जाने, जब तक शङ्ख चक्र धारण नहीं करता है, तब तक पवित्र नहीं होता है॥१२॥

अङ्कितः शंखचक्राभ्यामुभयोर्बाहुमूलयोः ।
समर्चयेद्धरिं नित्यं नान्यथा पूजनं भवेत् ।।१३।।

भाषा-दोनों बाहों के मूलों में शङ्ख चक्रों से अङ्कित पुरुष

प्रति दिन हरि की पूजा को करे, शङ्ख चक्र से रहित पूजा के अधिकारी नहीं है॥१३॥

मत्स्य पुराण में--

मच्चक्रांकितदेहो यो मद्भक्तो भुवि दुर्लभः।
नैवाप्नोति वशं मृत्योरप्याज्ञा भंगकृन्नरः॥१४॥

भाषा-भगवान् कहते हैं कि मेरे चक्र से अङ्कित देह जो मेरा भक्त है उसके दर्शन भूमि में भाग्य से होता है। इस तरह के भक्त मेरी आज्ञा भंग करने वाला भी यमराज के अधीन नहीं होता है॥१४॥

वाराह पुराण में श्रीसनत्कुमारजी के वचन--

कृष्णायुधाङ्कितो देहो गोपीचन्दनमृत्स्नया।
प्रयागादिषु तीर्थेषु स गत्वा किं करिष्यति॥१५॥

भाषा-जो शीत शङ्ख चक्र धारण करता है। गोपी चन्दन मृत्तिका से, उसका आयुध शङ्ख चक्र से अङ्कित देह, प्रयागादि तीर्थों में जाकर क्या करेगा, उसके प्रयागादि तीर्थों का फल हो चुका॥१५॥

पद्म पुराण में--

कृत्वा काष्ठमयं बिम्बं कृष्णशस्त्रैश्च चिह्नितम्।
यो ह्यङ्कयति चात्मानं तत्समो नास्ति वैष्णवः॥१६॥

भाषा-काष्ठ के बिम्ब बनाकर कृष्ण के शस्त्र शङ्ख चक्रों से चिह्नित कर जो अपने शरीर को अंकित करता है उसके समान वैष्णव अन्य कोई नहीं है॥१६॥

गोपीचन्दनमृत्स्नाभिर्लिखितो यस्य विग्रहः ।
शंखचक्रादिपद्मं वा देहे तस्य वसेद्धरिः ।।१७।।

भाषा-गोपीचन्दन मृत्तिका से शङ्ख चक्र वा पद्म गदा चारों से जिसके शरीर लिखित है उसके शरीर में हरि निवास करते हैं॥१७॥

ब्रह्माण्ड पुराण में ब्रह्म वाक्य--

दृष्ट्वा चक्राङ्कितं मर्त्यं मरणे समुपस्थिते ।
यमदूताःप्रणश्यन्ति आगच्छन्ति हरेर्गणाः ।।१८।।

भाषा-मरण काल में चक्राङ्कित मनुष्य को देखकर यमराज के दूत भाग जाते हैं हरि के पार्षद आकर ले जाते हैं॥१८॥

वामन पुराण में--

लीलयापि लिखेद्यस्तु बाहुमूले सुदर्शनम् ।
कुलकोटिं समुद्धृत्य स गच्छेत्परमां गतिम् ।।१९।।

भाषा-खेल रूप से भी जो बाहु मूल में चक्र को लिखेगा वह कुलों में से कोटि मनुष्यों के उद्धार कर मोक्ष को जायेगा॥१९॥

धारयेद्विष्णुभक्तस्तु चक्रंबाहौ तु दक्षिणे ।
वामे तु शंखराजानं वैष्णवं पदमाप्नुयात् ।।२०।।

भाषा-विष्णु भक्त जन चक्र को दक्षिण बाहु में शंखराज को वाम बाहु में धारण करेंगे तो मोक्ष को प्राप्त होंगे॥२०॥

॥ इति शीत शंखचक्र धारण निर्णयः ॥

अथ तप्त शंख चक्र धारण नियमः

ब्रह्म पुराण में--

ब्रह्मचारीगृहस्थोपि वानप्रस्थोऽथभिक्षुकः ।
अवश्यं धारयेच्चक्र मग्नितप्तमतन्द्रितः ।।२१ ।।

भाषा-ब्रह्मचारी गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासी वर्ग सभी प्रकार सावधान होकर अवश्य अग्नि से तप्त चक्र धारण करें॥२१॥

नारदीय पञ्च रात्र में--

द्वादशारं तु षट्कोणं वलयत्रयसंयुतम् ।
हरेः सुदर्शनं तप्तं धारयेत्तद्विचक्षणः ।।२२ ।।

भाषा-वारह आरवाला षट् कोणवाला तीन वलय वाला अग्नि से तप्त हरि के सुदर्शन चक्र को बाहु में जो धारण करता है वही बुद्धिमान् है॥२२॥

विष्णु स्मृति में--

यथाश्मशानजं काष्ठमनर्हं सर्वकर्मसु ।
तथाऽचक्रांकितो विप्रः सर्वधर्मवहिष्कृतः ।।२३ ।।

भाषा-जिस प्रकार श्मशान के काष्ठ सभी कर्मों में अग्राह्य है उसी प्रकार अचक्रांकित ब्राह्मण समस्त कर्मों के अनधिकारी है॥२३॥

ब्रह्माण्ड पुराण में पार्वती के प्रति शिव वाक्य-

शंखचक्रांकितो भक्त्या यः पूजयति मानवः ।
स साक्षाद्विष्णुसामीप्यं लभते नात्रसंशयः ।।२४ ।।
चक्रांकिताय विप्राय नित्यमन्नं ददाति यः ।

असंख्यातानि वर्षाणि विष्णुलोके महीयते ।।२५ ।।

भाषा-शंख चक्र से अंकित पुरुष का जो मनुष्य भक्ति से पूजा करता है, वह निःसन्देह साक्षात् विष्णु के सामीप्य मोक्ष को प्राप्त होता है॥२४॥ चक्रांकित ब्राह्मण के लिये जो नित्य अन्न देता है वह अपरिमित वर्ष पर्यन्त विष्णु लोक में निवास करता है॥२५॥

वाराह पुराण में--

म्लेच्छदेशेऽशुभे वापि चक्रांको यत्र तिष्ठति ।
योजनानि तथा त्रीणि ममक्षेत्रं वसुन्धरे ।।२६ ।।

भाषा-म्लेच्छदेश राक्षसों के निवास देश अंग वंगकलिंग-मग्ध सौराष्ट्र अशुभ इन देशों मे चक्रांकित पुरुष निवास करता है वहाँ तीन योजन तक हे पृथिवी मेरा क्षेत्र है। इस तरह भगवान् आज्ञा करते हैं॥२६॥

चक्रांकितभुजं मर्त्यं यस्तु निन्दति मूढधीः ।
स याति नरकं घोरं यावदाभूतसम्प्लवम् ।।२७ ।।

भाषा-चक्र से अंकित भुजा वाले मनुष्य की जो निन्दा करता है वह सृष्टि के प्रलय पर्यन्त घोर नरक में वास करता है॥२७

नारदीय पुराण में--

श्रीकृष्णचक्रांकविहीनगात्रः श्मशानतुल्यः पुरुषोऽथ-नारी। दृष्ट्वा नरं तं नृपतिः सवासाः स्नात्वा प्रसर्पेद्धरि-मंगलाय ।।२८ ।।

भाषा-श्रीकृष्ण चक्र से हीन शरीर पुरुष अथवा स्त्री, श्मशान तुल्य है उस नर को देखकर राजा वस्त्र के सहित स्नान कर भगवान् की सेवा करने के लिये जावे॥२८॥

प्रह्लाद संहिता में--

अग्नितप्तं सदा धार्य्यं द्वारवत्यां विचक्षणैः ।
नान्यस्थाने जातु राजन् सत्यमेतद्ब्रवीमिते ।।२९।।

भाषा-बुद्धिमान् अग्नि तप्त शंख चक्र द्वारिका में धारण करें, अन्य स्थान में नहीं। हे राजन् आपसे मैं सत्य कहता हूँ॥२९॥

बृहद् नारदीय में--

चतुर्थं द्वारकास्थानं मद्धाम सुरसेवितम् ।
तत्राह हेतिनासाध्वि तापयामि तनुं नृणाम् ।।३०।।

भाषा-चतुर्थ धाम द्वारका स्थान देवों से सेवित मेरा धाम है। उस द्वारका में शङ्ख चक्रादि से हे पृथिवी मनुष्यों के शरीर मैं ही तापता हूँ ॥३०॥

इससे सिद्ध होता है कि शीत शङ्ख चक्र गुरु के हाथ से दीक्षा काल में जहाँ चाहे वहाँ लेवे, तप्त शङ्ख चक्र द्वारका में लेवे द्वारका में किसी के हाथ से लेवे भगवान् कहते हैं कि द्वारका में शङ्ख चक्र मैं ही देता हूँ भगवान् तो गुरुवों के गुरु हैं गुरु से लेना हो चुका ।

इति श्री नैष्ठिक ब्रह्मचारिणा श्री वैष्णवदास शास्त्रिणा
श्री निम्बार्कपाद पद्मान्ते वासिना हिन्दी भाषया चक्र
शंख धारण द्वितीय संस्कारः संगृहीतः ॥२॥

अथ तुलसी धारण निर्णयः

पद्म स्कन्ध पुराण में--

यज्ञोपवीतवद्धार्य्या सदा तुलसीमालिका ।
नाशौचं धारणे तस्या यतः सा ब्रह्मरूपिणी ।।१ ।।

भाषा-जैसे यज्ञोपवीत निरन्तर धारणीय है। यज्ञोपवीत न रहने से जल नहीं पी सकता है। ऐसे तुलसी माला निरन्तर धारणीय है तुलसी माला गले में न रहने से जल पीने का अधिकार नहीं है। निरन्तर धारण करने से तुलसी अपवित्र नहीं होती है तुलसी ब्रह्म स्वरूप है॥१॥

पद्म पुराण में--

ये कण्ठलग्नतुलसीनलिनाक्षमाला
ये बाहुमूलपरिचिह्नितशंखचक्राः ।
ये वा ललाटपटलेलसदुर्ध्वपुण्ड्राः
ते वैष्णवा भुवनमाशु पवित्रयन्ति ।।२ ।।
कुलं पवित्रं जननी कृतार्था-
वसुंधरा भागवती च धन्या ।
स्वर्गे स्थितास्तत्पितरोपि धन्या
येषां कुले वैष्णवनामधेयम् ।।३ ।।

भाषा-जो कण्ठ में, तुलसी कमल के माला वाला है जो बाहु में शङ्ख चक्र वाला है जो ललाट में ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक वाला है इस तरह के वैष्णव जगत् को शीघ्र ही पवित्र करता है॥२॥ जिसके कुल में वैष्णव दीक्षा होती है उसके कुल पवित्र है माता

कृतार्थ है, जहाँ रहता है पृथिवी पवित्र है स्वर्ग में रहने वाले उसके पितृगण धन्य हैं॥३॥

स्कन्द पुराण में--

धातृफलकृता माला तुलसीकाष्ठसम्भवा।
दृश्यते यस्य देहे तु स वै भागवतो नरः ॥४॥

भाषा-धातृ फल की तुलसी काष्ठ की माला जिसके देह में दिखाई देती है वही मनुष्य वैष्णव है॥४॥

विष्णु धर्म में भगवद् वाक्य--

तुलसीकाष्ठमालां च कण्ठस्थां वहते तु यः।
अप्यशौचो ह्यनाचारो मामेवैति न संशयः ॥५॥

भाषा-तुलसी काष्ठ माला को जो कण्ठ में धारण करता है, वह अपवित्र होय क्रिया से हीन होय निःसन्देह मेरे को प्राप्त होता है॥५॥

श्रीनारदपञ्चरात्र में--

अशौचेचाप्यनाचरिकालाकालेचसर्वदा।
तुलसीमालिकांधत्तेस याति परमां गतिम् ॥६॥

भाषा-अशौच काल में अनाचार काल में समय असमय सर्व काल में जो तुलसी की माला धारण करता है वह मोक्ष को प्राप्त करता है॥६॥

प्रह्लाद संहिता में--

तुलसीदलमालां तु कृष्णोत्तीर्णां तु यो वहेत् ।
यत्र तत्राश्वमेधानां दशानां लभते फलम् ।।७ ।।
निवेद्य केशवे मालां तुलसीकाष्ठसंभवाम् ।
यो वहेच्च नरो भक्त्या तस्य वै नास्ति पातकम् ।।८ ।।
कण्ठलग्ना तु या माला सा कण्ठी परिकीर्तिता ।
तस्यार्धारणमावश्यं कर्तव्यं द्विजसत्तमैः ।।९ ।।

भाषा-श्रीकृष्ण के प्रसादी तुलसी पत्र माला को जो अपने गले में धारण करता है वह दश अश्वमेध फल को लाभ करता है॥७॥ तुलसी काष्ठ की माला श्रीकेशव भगवान् को धारण कराने के बाद प्रसादी को जो पहिरता है भक्ति से, वह पापों से छुट जाता है॥८॥ जो माला कण्ठ में लगी सटी रहती है वह माला कण्ठी कहाती है उस कण्ठी माला को ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य कभी न त्यागे॥९॥

क्षालितां पञ्चगव्येन मूलमन्त्रेण मन्त्रिताम् ।
गायत्र्या चाष्टकृत्वोच्चैर्मन्त्रितांधूपितांच ताम् ।।१० ।।
तुलसीकाष्ठसम्भूतां मालां यो वहते नरः ।
तारितं च कुलं तेन यावद्रामकथा क्षितौ ।।११ ।।
तुलसीकाष्ठमालां तु प्रेतराजस्य दूतकाः ।
दृष्ट्वा नश्यन्ति दूरेण वातोद्भूतो यथा नरः ।।१२ ।।

भाषा-पञ्चगव्य से स्नान कराकर गुरु मन्त्र पढकर। बाद ८ बार काम गायत्री से मन्त्रित कर धूप देकर॥१०॥ तुलसी काष्ठ

की बनाई माला को जो धारण करता है, वह जब तक लोक में श्रीराम की कथा रहेगी तब तक अपने कुल को तारता है॥११॥ गले में तुलसी काष्ठ की माला को देखकर यम के दूत दूर से भग जाते हैं। जैसे वायु के वेग से मनुष्य दूर जाकर गिरता है॥१२॥

स्कन्द पुराण में--

तुलसीकाष्ठमालां यो धृत्वा स्नानं समाचरेत्।
पुष्करे च प्रयागेच स्नातं तेन मुनीश्वर ॥१३॥
तुलसीकाष्ठमालां यो धृत्वा भुंक्तेद्विजोत्तमः।
सिक्थेसिक्थे स लभते वाजिमेधफलं मुने ॥१४॥

भाषा-जो तुलसी काष्ठ माला को गले में धारण कर स्नान करता है, हे मुनीश्वर ! उसको पुष्करराज प्रयाग राज स्नान हो चुका॥१३॥ जो तुलसी काष्ठ माला को गले में धारण कर भोजन (भगवत्प्रसाद) ग्रहण करता है। हे द्विजोत्तम हे मुने, वह जितनी बार ग्रास मुख में डालता है उतने अश्वमेध यज्ञ के फल को पाता है॥१४॥

पद्म पुराण में--

स्नानकाले तु यस्याङ्गे दृश्यते तुलसी शुभा।
गंगादिसर्वतीर्थेषु स्नातं तेन न संशयः ॥१५॥

भाषा-स्नान काल में जिसके गले में पाप को हरण करने वाली तुलसी दिखाई देती है। वह निःसंशय गंगा आदि तीर्थों में स्नान कर चुका ऐसे जानना चाहिए॥१५॥

बहुना किमिहोक्तेन शृणु त्वं वरवर्णिनि ।
विड्उत्सर्गादिकाले च न त्याज्या कण्ठमालिका ।।१६ ।।
अन्तकालेपि यस्याङ्गे तुलसीमालिका स्पृशेत् ।
तस्य देहोद्भवं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ।।१७ ।।

भाषा-श्रीशिवजी कहते हैं, हे पार्वति ! तुलसी माला के महत्व मैं कहाँ तक कहूँ मलमूत्र त्याग काल में भी गले में लगी हुई कण्ठी नहीं उतारनी चाहिये॥१६॥ मरण काल में भी जिसके गले में तुलसी की माला लगी रहती है, उसके देह से उत्पन्न पाप उसी काल छूट जाते हैं॥१७॥

कण्ठे शिरसि बाहुभ्यां कर्णयोः करयोस्तथा ।
बिभृयात्तुलसीं यस्तु स ज्ञेयो विष्णुना समः ।।१८ ।।

भाषा-कण्ठ में बाहुवों में कानों में हाथों में जो तुलसी की माला धारण करता है, उसको विष्णु के तुल्य जानना चाहिये॥१८॥

यत्कण्ठे तुलसी नास्ति ते नरा मूढमानसाः ।
अन्नं विष्ठा जलं मूत्रं पीयूषं रुधिरं भवेत् ।।१९ ।।
अतः सर्वेषु कालेषु धार्या तुलसीमालिका ।
क्षणार्धं तद्विहीनोपि विष्णुद्रोही भवेन्नरः ।।२० ।।

भाषा-जिसके कण्ठ में तुलसी नहीं है, वह अपने धर्म से पतित है। अन्न खाता है सो विष्ठा है जल पीता है सो मूत्र पीता है दूधादि पीता है सो रक्त है॥१९॥ इसलिये सर्व काल में तुलसी धारण करनी चाहिये एक क्षण अर्ध क्षण तुलसी त्यागने से विष्णु का द्रोही मनुष्य होता है॥२०॥

स्कन्द पुराण में--

न ये बिभ्रति वै मालां तुलसीकाष्ठसम्भवाम् ।
ते तु बिभ्यति हि यमाद्दण्डहस्तात्कुमेधसः ।।२१।।

भाषा-तुलसी काष्ठ की माला गले में जो नहीं धारण करता है, वह कुबुद्धि हाथ में दण्ड लिये हुये यमराज से भय खाता है॥२१॥

गरुड़ पद्म पुराण में--

धारयन्ति न ये मालां हेतुकाः पापबुद्धयः ।
नरकान्न निवर्तन्ते दग्धाः कोपाग्निना हरेः ।।२२।।

भाषा-तुलसी गले में धारण करना व्यर्थ मानते है इस तरह समझने कहने वाले पाप बुद्धि वाले तुलसी को गले में नहीं धारण करते हैं, वे हरि कोप से जल जाते हैं, नरक से छुट्टी नहीं पाते हैं॥२२॥ इत्यादि प्रमाणों से गले में तुलसी निरन्तर धारणीय है। दीक्षा काल में गुरु के हाथ से तुलसी धारण होय अन्यकाल अपने हाथ से।

तुलसी गले में धारण काल प्रार्थना मन्त्र--

तुलसीकाष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये ।
बिभर्मि त्वामहं कण्ठे कुरु मां कृष्णवल्लभम् ।।२३।।
यथा त्वं वल्लभा विष्णोर्नित्यं विष्णुजनप्रिया ।
तथा मां कुरु देवेशि नित्यं विष्णुजनप्रियम् ।।२४।।

भाषा-तुलसी काष्ठ से उत्पन्न श्रीकृष्ण के भक्तों को प्रिय हे माले ! मैं आपको कण्ठ में धारण करता हूँ श्रीकृष्ण के प्रिय मुझको

करें॥२३॥ जैसे आप विष्णु की निरन्तर वल्लभा हैं, और उनके भक्तों की प्रिया है। वैसे हि हे देवेशि मुझको विष्णु के, विष्णु के जन के प्रिय बनावे। इन दोनों मन्त्र से प्रार्थना करनी चाहिये॥२४॥ और दीक्षा प्रकरण और सर्व याग प्रकरण विस्तार भय से नहीं लिखा गया, दीक्षा श्रीनिम्बार्क कृत रहस्य षोडशी की रीति से लेनी चाहिये।

इति श्रीनैष्ठिक ब्रह्मचारिणा श्रीवैष्णवदासशास्त्रिणा
श्रीनिम्बार्कपादपद्मान्तेवासिना हिन्दीभाषया
तुलसीधारणतृतीयसंस्कारः संगृहीतः॥३॥
॥ इति वैष्णवसंस्कारकौस्तुभः ॥

श्रीनिम्बार्क प्रार्थना

निम्बार्क देव शरण हरण तापत्रय घनेरो।
जे जन शरण गयो फिरी न ताप घेरयो।।
अम्बरीष प्रह्लाद द्रुपदजा घनेरो।
निम्बार्क देव शरण हरण तापत्रय घनेरो।
पतित पाप हरण शरण पतित हूं घनेरो।
शरण पतित दोउ समाज आज एक तेरो।।निम्बार्क देव०।।
शरण के यश शून्यौं सर्व वेद शास्त्र हेस्यो।
पाप ताप दहन करो शरण अनल मेरो।।निम्बार्क देव०।।
दीन मैं तो शरण आय जाऊं अवतक तेरो।
वैष्णवदास आस राखु शरण शरण टेरयो।।निम्बार्क देव०।।

*

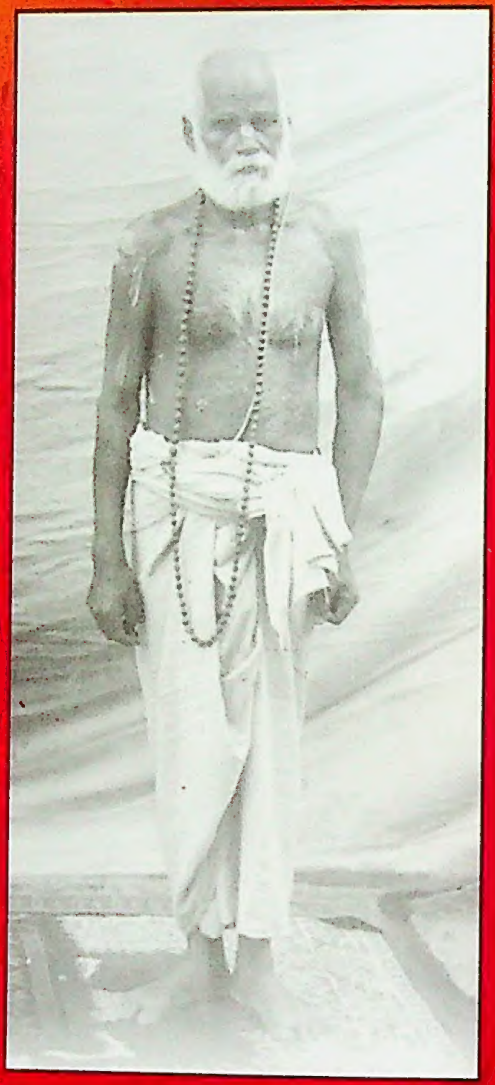

ग्रन्थ प्रणेता – विद्ववद्वरेण्य पं. श्रीवैष्णवदासजी शास्त्री

मूल्य : 5) पाँच रुपये